सत्र का इतिहास, वकास एवं योगदान

वैष्णव सत्र असम के राजनैतिक व धा र्मक क्षेत्रों में पछली साढ़े चार सदियों से महत्वपूर्ण भू मका अदा कर रहे हैं। कुछ सत्रों ने धा र्मक व सांस्कृतिक परिदृश्य से आगे बढ़कर राजनैतिक इतिहास को भी प्रभा वत कया है। यद्य प सदियों पश्चात आधुनिकता के प्रभाव के कारण सत्र के प्रति अथाह वश्वास में कमी आ रही है ले कन असमी समाज को जोड़ने वाला अपकेंद्रीय बल अभी भी प्रकार्यात्मक है। अच्छी आ र्थक स्थिति वाले, महापुरुष शंकरदेव के समय में स्था पत कुछ सत्रों की आज भी समाज में सम्मानजनक स्थिति है। 20वीं सदी के अंतिम दशक तक, लगभग प्रत्येक असमी परिवार सत्र के निकट संपर्क में रहा करता था और गुरुओं से शक्षा ग्रहण कर उनके निर्देशानुसार अपने जीवन का निर्वाह करता था। आज आधुनिक शक्षा और सभ्यता के प्रभाव के कारण, धा र्मक प्रतिबद्धताएं कमजोर हो रही है और लोग अ धक यथार्थवादी और भौतिकवादी होते जा रहे हैं। सत्र समय के साथ सामंजस्य नहीं स्था पत कर पा रहे हैं और पूर्व की भांति आम लोगों के साथ मजबूत बन्ध बनाए रखने में असमर्थ हैं। ले कन साढ़े चार शताब्दी पुराना संबंध अभी भी पूर्ण रूप से मृत नहीं हुआ है। यद्य प हमें असम में पाँच हजार से अ धक सत्रों के नाम मलते हैं ले कन वास्तव में संख्या इतनी अ धक नहीं है। कुछ मूल सत्रों से निकली हुई शाखाएं और उपशाखाएं ऐसे ऐसे सत्रों की गणना में कुछ सौ की वृ द्ध कर देती हैं। वशेष रूप से गैर ब्रह्मचारी समूह से संबंध रखने वाली संतानों द्वारा अपने मूल सत्र को छोडकर नए सत्रों की स्थापना ने वर्तमान में जादिया (ब्रह्मपुत्र घाटी का सबसे पूर्वी भाग) एवं कोच बिहार (उत्तर बंगाल में) के बीच इनकी संख्या में वृ द्ध में योगदान दिया। सत्र केवल वैष्णव आस्था के प्रसार का केंद्र ही नहीं बल्कि कला, संस्कृति एवं शक्षा के निकर्षण का स्थान भी हैं। असम में जीवन को प्रगतिशील एवं समृद्ध बनाने में सत्र का अत्य धक योगदान रहा। परंतु इस वषय पर प्रकाश डालने से पूर्व उ चत होगा की सत्र नामक संस्था एवं इसकी उत्पत्ति कैसे हुई, इसका एक सं क्षप्त संज्ञान लया जाय।

सत्र शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द "सालरा"से हुई है, जिसका तात्पर्य है एक लम्बा ब लसत्र या चावल और पानी के वतरण का केंद्र (अन्न सालरा एवं जल सालरा)। वैदिक साहित्य में एक दिन के यज्ञ का उल्लेख एकहा-यज्ञ के रूप में है, जब क एक से अ धक कन्तु बारह दिन से कम का आयोजन अहिन यज्ञ कहा जाता है और जो बारह दिन से अ धक हो उसे सालरा यज्ञ कहा जाता है। ले कन वैष्णव धा र्मक केन्द्रों में ब ल सत्र के लए कस प्रकार से सालरा शब्द का प्रयोग हुआ, उसका यज्ञों से कोई संबंध नहीं है, संस्था की ये पहचान आत्म चंतन योग्य मुद्दा है। बौद्धकाल के प्रारम्भ से पहले भारत में हिन्दू मठ शक्षा, ध्यान और धा र्मक परिचर्चाओं के आवासीय केंद्र थे। बौद्ध व जैन धर्मों के उदय के दौरान वहार और संघम, श्रमण के केन्द्रों के रूप में उभर कर आए, जो आवासीय तथा धा र्मक उद्देश्यों के लए प्रयोग कए जाते थे। भक्षु या श्रमण, जैसा क वे जाने जाते हैं, जीवन के सुपरिभा षत मार्ग का अनुसरण करते

हुए ऐसे मठों में काफी सरल जीवन व्यतीत कया करते थे। बौद्ध व जैन वहारों के पतन के उपरांत, मठों का उभरना प्रारम्भ हो गया ले कन उन समुदायों द्वारा अपनी धा र्मक क्रयायों को संपादित करने में ब ल सत्र के लए सालरा शब्द का प्रयोग कया जाता हो, ऐसा नहीं लगता। तब कैसे और कस परिप्रेक्ष्य में नव वैष्णव धर्म गुरुओं ने सत्र की पहचान धा र्मक सेवाओं और उपदेशों के केंद्र से की।

असम में वैष्णववाद के लए सर्वा धक प वत्र पुस्तक भागवत पुराण है। सर्वप्रथम बाबा शुक ने राजा परी क्षत के समक्ष इस पुस्तक का वाचन कया जो अपनी होने वाली मृत्यु के अंतिम दिनो को गन रहा था। परिणामस्वरूप जब बाबा सुत उग्रसबा नै मष के जंगलों में पहुंचे, जहां पर हजारों सालों से सौनक व अन्य सालरा (ब लसत्र) क्रया कर रहे थे, साधुओं ने उनसे वहाँ भागवत के वाचन हेतु आग्रह कया जिसका बाबा सुत ने ब लसत्र के उपरांत पालन कया। चूं क भागवत का वाचन सालरा क्रया के अवसर पर हुआ और ईश्वर की महानता पर वस्तार से चर्चा व प्रशंसा हुई, असमी वैष्णवों ने नै मष अरण्य में सालरा क्रया में लीन बाबाओं के मार्ग का अनुसरण करते हुए सत्र की पहचान शक्षा के केंद्र व भक्तों के साथ वचार वमर्श के एक स्थान से की। समयांतराल में इन स्थानो में सत्र का उदय हुआ।

"सत्र" शब्द की वैदिक उत्पत्ति होते हुए भी यह नव-वैष्णववाद धर्म और असम के सामाजिक जीवन का एकीकृत भाग बन चुका है, जहां इसे मूल आसमी शब्द के रूप में ग्रहण कया जा चुका है, जो एक वशेष महत्व रखता है। उससे अ धक, इसे एक द् वतीयक प्रत्यय के साथ जोड़ा गया, इसे 'सत्रीय' की भांति प्रयोग कया जाता है, जो क असम के वैष्णव धर्म की वशेष सांस्कृतिक परंपरा को प्रकट करता है। यह मुख्यतया इस कारण है क इसके संस्कृत व अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं में प्रयोग होने वाले अर्थ से काफी अलग अर्थ असम में प्रयोग होता है।

ऋग्वेद में "सत्र" शब्द का उल्लेख निम्न प्रकार से कया है:

सत्तरहजातरीयता नमोभी कुम्भेरेटः सयिचतुः समनं।

सत्र में की गयी प्रार्थना से प्रसन्न होकर सूर्य भगवान और वरुण ने अपना वीर्य एक जार में डाला जिससे बाद में ऋ ष व शष्ठ का जन्म हुआ। यहाँ सत्र "यज्ञ"को परिल क्षत करता है। इसी तरह शुक्ल यजुर्वेद में हम पाते हैं :

'स्त्रस्य रि धरासत्गंमा ज्योति मत्र अभं यहाँ भी सत्र का प्रयोग यज्ञ के रूप में हुआ है।

वैदिक साहित्य और यहाँ उल्लि खत फुटनोट से यह प्रतीत होता है क यज्ञ (ब ल) 5 श्रे णयों में वर्गीकृत कए गए- होम, इष्टि, पशु, सोम और सत्र। सत्र यज्ञ क प्रकृति "गोवमायन यज्ञ"है जो 361 दिन तक चलता है और सोमयज्ञ में शा मल कया जाता है। ले कन एक बार में 12 से अ धक दिन तक कये जाने वाले यज्ञों को सत्र कहा गया। समान्यतया गोवमायन यज्ञों को सत्र कहा जाता था।

ब्राह्मणों और उपनिषदों में भी समान अर्थ मलता है। छंदोज्ञ उपनिषद में उल्लेख कया गया है "अथा यत सत्रायनम"जिसका तात्पर्य है क लम्बे समय तक कये जाने वाले सत्रों (यज्ञों) की तुलना ब्रह्मचर्य से की जाती है। सत्र यज्ञ एक बार में लम्बे समय तक कए जाते हैं। सत्र यज्ञ की क्रया द्वारा कोई व्यक्ति ब्रह्मचर्य पालन की भांति ही ब्रह्मत्व (देवत्व) को प्राप्त कर सकता है। 'सत्र: आत्मनम त्राणम ', जिसका अर्थ है सत्र (यज्ञ) आत्मा की रक्षा करता है।

'अभयस्य हे यो डेटा श पूज्यः सेटटंग नृप:, सत्तरांघे वर्धारते तस्य सदैवाभ्या द क्षणाम'। -

- मनु संहिता

जो राजा अपनी प्रजा की चोरों से रक्षा करता है, उसकी हमेंशा प्रशंसा होती है। क्यों क ऐसा राजा एक दीर्घकालीन यज्ञ सम्पन्न करता है, पुजारियों को दान देता है और इस प्रकार अपने लोगों की रक्षा हेतु समर्थ बनने के लए यज्ञों के माध्यम से शक्ति व संसाधन प्राप्त करता है।

भारतीय साहित्य में भी सत्र निर्वाद रूप से समान अर्थ को प्रकट करता है। माघ द्वारा र चत " शशुपाल वध"में यु धष्ठिर द्वारा राजसूय यज्ञ सम्पन्न करने और अन्य लोगों से पहले कृष्ण को अर्घ्य (ईश्वर को सम र्पत की जाने वाली वस्तुए) देने का उल्लेख है। यहाँ यज्ञ में भाग लेने वाले पुरोहितों का भी उल्लेख कया गया है।

'सत्रीनांग नर्पतेस्व सम्पदा 'जिसका तात्पर्य है जो भी यज्ञ को सम्पन्न करता है उसे सत्रिन कहा जाता है।

का लदास की "रघुवंश"में सत्र शब्द को यज्ञ का उल्लेख करने के लए प्रयोग कया गया है।

हबिशे दीर्घसत्त्रस्य सा छेदनिंग प्रत्येश:,

भुज्याँगा पहितांग दानंग पटलमधीतिस्थति'।

वह (प वत्र गाय सुर भ) अब पाताल में है, जिसके द्वारों की रक्षा भली भांति सर्पों द्वारा की जाती है, जिससे वह वरुण को दूध उपलब्ध कराकर सत्र (ब ल) के लए आवश्यक घी बनाने हेतु सक्षम कर सके।

महाभारत और कुछ पुराणों में भी सत्र शब्द का प्रयोग समान अर्थो में कया गया। ले कन धीरे धीरे इसका व्यापक अर्थों में प्रयोग होने लगा और संस्कृत भाषा में हमें सत्र शब्द का अर्थ लए हुए कई दूसरे शब्द भी मलते है।

धीरे-धीरे सत्र शब्द के प्रयोग का वस्तार ब ल क्रयाओं से सहयोगी प्रकृति की व भन्न क्रयाओं से संबन्धित स्थानो के लए हो गया। वी॰ एस॰ आप्टे की स्टूडेंट इंग्लिश डक्शनरी इस प्रकार सत्र का वस्तारित अर्थ देती है:

(i) 13 दिन से लेकर 100 दी तक का ब ल सत्र

(ii) सामान्य ब ल

(iii) पतर, भोग या उपहार

(iv) उदारता, दयाशीलता

(v) पुण्य

(vi) घर, आवास

(vii) आवरण

(viii) लकड़ी, जंगल

(ix) टैंक , तालाब

(x) हेरा-फेरी, ठगी

(xi) शरणस्थान, बसेरा, गुप्तस्थान

व्युत्पत्ति के अनुसार 'सत्र' (सद+त्र) वह है जो पुण्यों की रक्षा करता है (जैसा क करण शर्मा की संस्कृत असमी शब्दकोश में उल्लि खत है)

सत्रा धकार श्री नारायण चन्द्र गोस्वामी ने अपनी पुस्तक 'सत्रीय सांस्कृतिक रूपरेखा' में 'नीलकंठ बस्न धृतम'से निम्न प्रकार से उद्धृत कया है :

'बाहुभ्यः दीयते यात्रा तृप्यन्ति प्रनिनांस बहु,

कार्टरो बहबो यात्रा तात सतत्रम भधीयते।'

इसका अर्थ है एक स्थान जहां बहुत से भक्त निवास करते हैं, जहां दान दिया जाता है और जीवन को संतुष्टि प्राप्त होती है,उसे सत्र कहा जाता है। उन्होने व्याख्या की; सत्र उसे कहा जाता है जो लोगों को प वत्र स्थानों की ओर उन्मुख करता है और पुण्य की रक्षा करता है।

इस प्रकार यह प्रतीत होता है क सत्र शब्द का अर्थ एक वशेष कार्य से एक वशेष स्थान के निरूपण तक वस्तारित हो चुका है। कई शब्दकोशों में यज्ञ के अपने मूल अर्थ को कायम रखते हुए कई अन्य शब्दों जैसे आश्रयस्थल, एक धा र्मक स्थान, एक आवास, सदन आदि को शा मल कया है। असमी के अतिरिक्त अन्य भाषाओ, वशेष रूप से बंगाली में सत्र शब्द जलसत्र, अन्न सत्र और भोजनालयों को भी निरू पत करता है।

ले कन बंगाली धा र्मक पुस्तकों जैसे महाभारत में, आज भी सत्र शब्द यज्ञ के लए प्रयोग कया जाता है।

असम में 'सत्र' शब्द का प्रयोग :

यह निश्चित करने के लए बहुत अ धक शोध कार्य नहीं हुआ क असम में यह शब्द कस प्रकार प्रचलन में आया। असम में वैदिक सांस्कृतिक धारा के प्रसार के दौरान तथा परिणामस्वरूप उपजे नव-वैष्णववाद आंदोलन के दौरान महापुरुष शंकरदेव, माधवदेव, भ देव व अन्य ने धा र्मक क्रयाओं को सम्पन्न करने के लए मुख्य और महत्वपूर्ण आश्रय स्थल के रूप में सत्र शब्द का प्रयोग प्रारम्भ कया। प्राचीन असम के कुछ ताम्रसासन और प्रस्तर अ भलेखों में उल्लि खत निश्चित जानकरियों से ता र्कक निष्कर्ष निकले जा सकते हैं, जैसे क:

(अ) राजा भास्कर वर्मा 'निधानपुर ताम्रसासन' के अनुसार सातवीं सदी में (जो क वास्तव में छठी सदी के राजा भूति वर्मा द्वारा दिए गए ताम्रपत्र का नवीनीकृत रूप है) भू म से प्राप्त उपज का छठा भाग व भन्न वंशो (गोत्रों) के ब्राह्मणों को दान दिया जाता था, जिसका प्रयोग पूजा, देवी-देवताओं को चढ़ाए जाने वाले भोज्य-पदार्थो और मेहमानों के मनोरंजन जैसे कार्यों में करना पड़ता था। इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है क उस काल के दौरान सत्र शब्द का अर्थ केवल यज्ञ नहीं था बल्कि उपरोक्त शब्दों को भी शा मल कया जाता था। यहाँ सत्र का प्रयोग अत्यंत मत्वपूर्ण है और धा र्मक सेवाओं से जुड़ा हुआ है।

(ब) सुरेन्द्र वर्मा (पाँचवी सदी) के 'उमाचल प्रस्तर'अ भलेख में भगवान बलभद्र स्वामी के गुफा मंदिर, भागवत शब्द के प्रयोग और उनकी पूजा की प्र क्रया का उल्लेख पाया गया है। ये पूजा की प्र क्रया

भगवान कृष्ण, वसुदेव की पूजा के लए अनुसरण की गयी व्यवस्था के समरूप है। राजा भूति वर्मा (छठी सदी) के 'बोरगंगा प्रस्तर' अ भलेख में अश्वमेघ यज्ञ (घोड़े की ब ल) और परमदेवत या परमभागवत का उल्लेख कया गया है। इसी तरह देवपानी से प्राप्त भगवान वष्णु की प्रस्तर मूर्ति, जिसे आठवीं या नवी सदी में नि र्मत माना जाता है, के पछली ओर चार पंक्ति के शब्द खुदे हुए हैं। 'भागवत नारायणस्य शैली प्रतिमा भक्तनन' ऐतिहा सक रूप से महत्वपूर्ण है। समकालीन युग में उकेरे गए 'शंकरनारायन' के प्रस्तर अ भलेख में यह उल्लि खत था - 'अदो नामा शंकर-नारायणन कीर्तन' जहां कीर्तन शब्द का प्रयोग ध्यान देने योग्य है।

इस प्रकार ये प्रतीत होता है क व भन्न लेखों और अ भलेखों के माध्यम से सत्र, भागवत और नाम-कीर्तन (ईश्वर की स्तुति से सम्बन्धित प वत्र पुस्तकों का वाचन) जैसे शब्दों का असम में नव-वैष्णववाद आंदोलन की शुरुआत के काफी पहले वस्तार हो चुका था।

(स) एक प्रस्तर अ भलेख 1970 में उस समय अम्बारी (गुवाहाटी के अंदर) से प्राप्त कया गया, जब वहाँ कपड़ा संस्थान भवन के निर्माण हेतु भू म की खुदाई चल रही थी। यद्य प प्रस्तर (अब राज्य संग्रहालय में संर क्षत) पर उत्कीर्ण ल प अपठनीय और जीर्ण अवस्था में थी, फर भी डॉक्टर प्रतापचंद्र चौधरी ने उसका अर्थ निकालने के लए अध्ययन कया। डॉक्टर डंबेश्वर सर्मा द्वारा संपादित 'कामरूप सासनवली'या डॉक्टर महेश्वर नेवुग द्वारा संपादित 'प्राच्य सासनवली', इन दोनों प्रख्यात वद्वानो में से कसी ने भी डॉक्टर चौधरी के निष्कर्षो का वरोध नहीं कया। डॉ. चौधरी के अनुसार, अ भलेख निम्न प्रकार से पढे जाते हैं:

आदित्यसमा श्री समुद्र पला राज्ये प्रबल सब सका

सत्तर सगुना क्रया संवा सन बोले...

दान पुण्यं सजा। योगीह ी सका ईशा बना चक्र।

मुरहा भानती

उपरोक्त ल प से प्रद र्शत होता है क तानाशाह समुद्रपाल, जो सूर्य की भांति चमक रहा था, के राज्य में आवासीय सत्र मौजूद थे जहां धर्म के तीनों रूपों सत्ता, राजा और तम का पालन कया जाता था।

संतजन कहा करते थे क दान देना पुण्य का प वत्र कार्य था, उदारवादी लेखक ने इसकी व्याख्या की (योगीह ी, 1154 शक) (1232 ईस्वी) के दौरान योगीह ी में एक सत्र मौजूद था, जहां धर्म के तीनों रूपों का अनुसरण प्रचलन में था। निर्गुण(जुनूनी रूप से निर्मल) शब्द का वपरीत अर्थ धारण करने वाले सगुण

शब्द का तात्पर्य व भन प्रदर्शनों जैसे प्राच्य सासनवली (डॉ. महेश्वर नेवुग द्वारा संपादित) में उल्लि खत योगीह ी सत्र के यज्ञों (ब ल) आदि से है।

(द) एक प्रस्तर अ भलेख नौगाव के लंका में पाया गया जो अब असम राज्य संग्रहालय में सुर क्षत रखा जा चुका है। डॉ. प्रताप चंद्र चौधरी ने उन ल पयों का अर्थ निकाला और बाद में 1977-78 में कामरूप अनुसंधान स मति के शोधपत्र के 23वें अध्याय में उन्हे प्रका शत कया। डॉ. चौधरी के निष्कर्षों के अनुसार प्रस्तर अ भलेख की 12 पंक्तियों में से 9वी, 10वी व 11वी पंक्ति में सत्र शब्द का उल्लेख कया गया है जो निम्न प्रकार है:

पंक्ति 9 में : त्यस्लेशा बिन्यस्त वद्यावत, यात्रा सत्तरङ्ग बा असरमनग, तस्य धर्म मन्दिरंग।

पंक्ति 10 में: सत्तरङ्ग शलांग स्व, अत्तशीलोंग स्व सौहार्दंग; यस्य हत्ता गृहदी अर्ध दबकम।

पंक्ति 11 में: यात सत्तर बसते, श्वः वष्णु), यह सदा तू सत्तर बिचरंतृ भ।

यहाँ सत्र शब्द का प्रयोग समान अर्थ जैसे आश्रम और धर्म मंदिर शब्द को प्रकट करने के लए प्रयोग कया जा चुका है। उदाहरण के लए : "यत सत्रे वसते, स्वाह वष्णु", जिसका तात्पर्य है क सत्र वह है जहां वष्णु रहते हैं।

इन प्रस्तर अ भलेखों से यह संक लत कया गया है क बाराही के राजा महामा णक्य ने जंगल क्षेत्र के अंदर स्थित बामदेव नामक गाँव को दीनानाथ नाम के एक ब्राह्मण को दान दिया था। उसने वहाँ एक आश्रम स्था पत कया और वष्णु का मंदिर बनवाया और धा र्मक सेवाएँ दी। (प्रस्तर अ भलेखों क खुदाई 1274शक संवत या 1352 ईस्वी में हुई थी।) परन्तु यदि 'अबो ध'शब्द का प्रयोग 4 के अर्थ के लए कया गया था, तो शक संवत 1274, 1332 ईस्वी होना चाहिए। ले कन यह शब्द अलग अलग समय पर 7 और 4 दोनों को इं गत करता है। 'प्राच्य सासनवली'में डॉ. महेश्वर नेवुग ने प्रस्तर अ भलेखों के काल निर्धारण के समय 'अबो ध'के लए 4 का उल्लेख कया है और उस स्थिति में प्रस्तर अ भलेखों का काल 1244 शक संवत होना चाहिए।

इन दोनों प्रस्तर अ भलेखों के आधार पर कुछ निष्कर्ष निम्न प्रकार से निकले जा सकते हैं:

(1) 13 वीं व 14 वीं शताब्दी में सत्र मौजूद थे ले कन वे उस समान प्रतिरूप के नहीं थे जैसा क नव-वैष्णव काल के दौरान उन्हे स्था पत कया गया था। ले कन यह निश्चित था क सत्र शब्द उस समान अर्थ को इं गत करता था जो धा र्मक स्थानो या धा र्मक मंदिरों द्वारा प्रयोग कए गए हैं। क्यों क

ताम्रसासन के प्रस्तर अ भलेख और प्रस्तर मूर्तियों के ऊपर केवल वास्त वक घटनाओं का प्रभाव था और लोगों की स्वीकार्यता का उल्लेख कया गया था।

(2) इन दो अ भलेखों के अनुसार, सत्र आवासीय क्षेत्र थे जहाँ पुरोहित और भक्तगण धा र्मक कार्यों का निष्पादन करते थे और इनके अंदर निवास कर सकते थे।

(3) वर्तमान समय में इनकी पहचान यज्ञ आयोजन के केन्द्रों के रूप में करने के बजाय सत्र शब्द को उस स्थान के लए प्रयोग कया जाता है जहां वैदिक धा र्मक गति व धयां सम्पन्न की जाती हैं।

यह निश्चित नहीं है क असम में भक्तिकार्यों के वैष्णव केन्द्रो क पहचान के लए कब तक सत्र शब्द का प्रयोग कया गया। आमबारि के प्रस्तर अ भलेखों के अध्ययन के पश्चात डॉ. प्रतापचंद्र चौधरी ने राय दी क सत्र शब्द का प्रचलन 13वी सदी से ही था तथा इसकी उत्पत्ति वैष्णवकाल में नहीं हुई। ले कन आमबारि के प्रस्तर अ भलेख इतने अपठनीय और जीर्ण अवस्था में हैं क डॉ. चौधरी के मत क सत्यता अभी भी संदेहास्पद है। तब हम क व अनंतकंडाली द्वारा ल खत काव्य, 'वृत्तासुर बध काव्य' की ओर देखते हैं, जहां लेखक ने सत्र का उल्लेख असम में वैष्णव धा र्मक क्रयाओं के एक केंद्र के रूप में कया है। इस पुस्तक में अनन्तकंडाली अपनी पहचान देते हुए उल्लेख करता है क उसके पता रत्नपाठक ने हाजो में एक सत्र क स्थापना की और वहाँ भागवत का वाचन व व्याख्या की। ले कन इस संस्था का उदय व वकास रत्नपाठक के समय के दौरान इसके वशेष लक्षणो के साथ नहीं हुआ। अनंतकंडाली सत्र का उल्लेख ऐसे स्थान के रूप में करते हैं जहां वैष्णव भक्त भागवत के वाचनों को सुनने के लए इक ा हुआ करते थे। न तो शंकरदेव के लेखों में और न ही उनकी जीवनियों में सत्र का उल्लेख मलता है। हमें इसका उल्लेख माधवदेव देव के लेखों में भी नहीं मलता।

सत्र और श्रीमद भागवत :

चूं क सत्र की गति व धयों के उल्लेखों से वैष्णव धर्म को जोड़ दिया गया इस लए हम आसानी से कह सकते हैं क असम में नव वैष्णववाद संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में सत्र शब्द का अर्थ परिवर्तन के दौर से गुजर चुका है। मूल श्रीमद भागवतगीता में सत्र शब्द का प्रयोग यज्ञ (ब ल) को इं गत करने के लए कया गया ।

‘ओम नै मसेहा नि मषा क्षेत्रे रिसयाह सौनकादयः,

सत्तरङ्ग सरगया लोकया सहस्रसममासता’।

प्राचीन समय में सौनक और अन्य संतों ने वष्णु की प्राप्ति को ध्यान में रखते हुए वष्णु तीर्थ के रूप में प वत्र माने जाने वाले प वत्र स्थान नै मषारण्य में हजारों साल लंबे यज्ञ(ब ल) का आयोजन कया। यहाँ व्यख्याताओं ने 'अनि मष खेत्र'का उल्लेख बिष्णु खेत्र के अर्थ में कया है।

श्रीमद भागवत के प्रथम अध्याय के 21वे श्लोक के पहले भाग में 'दीर्घ सत्र'शब्द का प्रयोग निम्न ल खत परिपेक्ष्य में कया गया है:

“क लमागतमजन्य, खेतरहस्मिन् वैस्नव बयां,

अ शना दीर्घा सत्तरेणा कठायंग सखयाना हरेः।”

“क लकाल (पाप के समय) के उपागम को संवेदित करते हुए हम सब यहाँ यज्ञ (ब ल) में स्वयं को शा मल करने के लए तथा आध्यात्मिक निर्देशों और ईश्वर की प्रशंसा संबंधी परिचर्चा में समय व्यतीत करने के लए एकत्र हुए हैं।

यज्ञ के चरणो में अंतराल के दौरान संत सुत ने वहाँ एकत्रित ध्यानमग्न साधुओं के समक्ष भागवत का पाठ कया और व्याख्या की।

महापुरुष शंकरदेव ने श्रीमद भागवत का असमी में अनुवाद करते हुए 'सत्र'का समान अर्थ में प्रयोग कया है ले कन संभवतः इसे भागवत वाचन के केंद्र के रूप में इं गत कया।

नै मषारण्य में ,जो क वष्णु तीर्थ के रूप में एक प वत्र स्थान है, 28,000 साधुओं ने संत सौनक की अध्यक्षता में संत सुत के पास एक सत्र की स्थापना की और भागवत तथा इसके उपदेशो को सुना।

'हमने हजारो वर्षो लंबे यज्ञ को प्रारम्भ कया और जले हुए घी (होम) से निकले हुए धुएँ ने हमारा रंग-रूप भी धुए जैसा कर दिया।'

श्रीमद भागवत में उल्लेख कया गया है (प्रथम छंद, तृतीय पंक्ति) क 'संतो के प्रति सम्मान प्रद र्शत करते हुए दूसरे संतो ने संत सुत के पास एक सत्र क शुरुआत की'। द् वतीय छंद क द् वतीय पंक्ति में कहा गया है क "हमने यहाँ हजारो साल लंबा यज्ञ कया।"

परंतु जो भी हो, हम पाते हैं क यज्ञ के अर्थ में सत्र का वचार प्रमा णत है क्यों क शंकरदेव ने अगले छंद में हजारो वर्षो तक कए जाने वाले यज्ञ को इं गत कया है। यह उन बहुत से लेखकों के संकेतों का वरोधाभासी है जो यह दावा करते हैं क शंकरदेव ने सत्र का प्रयोग हजारों साल लंबे यज्ञ के लए उसी अर्थ में कया जिस अर्थ में असम के वैष्णव सत्रों का कया।

इस परिपेक्ष्य में सत्रा धकार पीताम्बर देव गोस्वामी की भागवत में उल्लि खत सत्र और यज्ञ की धारणा महत्वपूर्ण है। वो कहते हैं जैसे नै मषारण्य में दो यज्ञ समान वातावरण में लगातार कए गए, उन दोनों यज्ञों को कर्मसत्र (भौतिक मार्ग में ब ल) और ब्रह्मसत्र (जहां ईश्वर की दै वक शक्ति और आत्मा की मोक्ष प्राप्ति पर चर्चा हुई) कहा जा सकता है। इस प्रकार सुत के नेतृत्व में संतों ने दिखाया क दोनों प्रकार के सत्र वहाँ आयोजित कए गए।

प्रख्यात वद्वान, लेखक और इतिहासकर कालीराम मेंढ़ी असम साहित्य सभा में दिए गए अपने भाषण में कहते हैं क : "कुछ शब्द अपनी वास्त वक उत्पत्ति व अर्थ को खो चुके हैं। उदाहरण के लए हम सत्र शब्द को ले लें। ऋग्वैदिक युग में बारह या अ धक दिनों तक लगातार कए जाने वाले यज्ञ को सत्र कहा जाता था। भागवत में इसके अर्थ में वस्तार हुआ, जहां यह उल्लेख कया गया है क सौनक के नेतृत्व में संतो क बहुत बड़ी संख्या नै मषारण्य में एकत्र हुई और ईश्वर से मलन के लए वहाँ 1000 साल का यज्ञ निष्पादन कया। तब इसके अर्थ में पुन: वस्तार हुआ। अब यह ईश्वर से मलन की इच्छा के साथ क जाने वाली भक्तिपूर्ण क्रयाओ से संबन्धित स्थान को इं गत करता है।"

इस प्रकार यह माना जा सकता है क नै मषारण्य में श्रीमद भागवत पर परिचर्चा ने सत्र के अर्थ में वस्तार हेतु मार्ग प्रशस्त कया, वशेष रूप से धा र्मक परिचर्चाओ के निष्पादन से संबन्धित केंद्र के रूप में। श्रीमंत शंकरदेव ने श्रीमद भागवत के प्रथम भाग का अनुवाद असमी में कया। चतुर्थ छंद की द् वतीय पंक्ति में हमें दो श्लोक, "सत्रांग सर्गया लोकया सश्रम मसता"(वष्णु की शरण में पहुचने के लए हजार साल लंबे यज्ञ का निष्पादन कया) और "कलीमगतमजन्य खेत्रेहिस्मिन वैष्णव बयाम" (क ल की पापों से भरी आयु आ रही है और इस लए हम यहा हजारों साल लंबे यज्ञ की शुरुआत करने के लए इक ा हुए है। इस उद्देश्य के लए ईश्वर के प्रवचन सुनने का सबसे सही समय आ गया है) मलते हैं। श्रीमद भागवत के असमी प्रारूप में महापुरुष ने लखा:

"मंयकारी (और मध्यकारी) सुटका पतीला सत्तर तथा ,

सौनका प्रमुख्ये सुने भगवता कथा ,

सौनका बढ़ती सुना सुता महाम ण ,

परमा पतिकी काली फैले हेनजानी ;

अरम्भिलो यज्ञ एमी सहस्रा बतसर ,

होम धुम्रे धूम्रबरना भइले कलेबोर "।

उपरोक्त को छोडकर शंकरदेव व माधवदेव ने अपने लेखों यहाँ तक की जीवनियों में, कहीं भी 'सत्र'शब्द का उल्लेख नहीं कया गया है। फर भी इसके 'भागवत'तथा 'हरिकथा' (अर्थपूर्ण आध्यात्मिक परिचर्चा) के साथ संबद्धों के कारण और महापुरुष शंकरदेव, माधवदेव, दामोदरदेव, हरिदेव, भ देव और अन्य नव वैष्णव आंदोलन के दौरान धा र्मक और आध्यात्मिक केन्द्रों के रूप में पहचान के कारण, सत्र भागवत के वचन व इसके उपदेशों के श्रवण के लए एक स्थान को इं गत करता है। और इस प्रकार 'सत्र'शब्द ने असम में अपने मूल अर्थ को खोना प्रारम्भ कया। ले कन नव वैष्णववाद धा र्मक आंदोलन के प्रारम्भिक चरण के दौरान, 'सत्र'शब्द पूरी तरह से वह अर्थ नहीं धारण करता जिससे यह बाद में जाना जाने लगा।

असम में सत्र सबसे पहले शंकरदेव के समय के दौरान स्था पत नामघर, कीर्तन घर और हरिगृह में परिल क्षत हुआ। श्री हरिदेव द्वारा स्था पत मनेरी सत्र प्रारम्भ में हरिदेवाश्रम या गुरुदेवाश्रम के नाम से जाना जाता था। यह जानकारी नहीं है क अपने निर्माण की अवस्था में 'बाहरी' सत्र, सत्र के निश्चित आकार में था या नहीं।

ले कन हम पतबौसी सत्र में प्रथम बार पूर्ण रूप से वक सत संस्था का रूप पाते हैं, जिसे शंकरदेव द्वारा अपने शष्यों (दामोदर देव की जीवनी के अनुसार) के लए हटी की चार पंक्तियों के साथ स्था पत कया गया था। 'गुरुचरितकथा'में बोरदोवा में कीर्तनघर या हरिगृह के निर्माण का उल्लेख मलता है। डॉ. महेश्वर नेवुग ने लखा:

" जीवनी में मले उल्लेख के अनुसार, ववाह के पश्चात 54 वर्ष की अवस्था में शंकरदेव अलीपुखुरी में रहकर भगवान कृष्ण की पूजा और धा र्मक क्रयाओं को करने लगे। ले कन वहाँ कुछ कठिनाइयों का सामना करने के बाद वे थोड़ी दूर पर स्थित अपने पता कुसुंभर के खेत में बस गए, जो वहाँ सरसों के बीज उगाया करते थे। यह पूरी संरचना का प्रारम्भिक आकार था,जैसा क आगे आने वाले समय में देखा गया ।"

ले कन श्रीमंत शंकरदेव ने पहले केवल नामघर का निर्माण कया। रामचरन ठाकुर का 'गुरुचरित'कहता है क:

"संकरा कीर्तन घर साजिबेका लैला,

भीठी बं धबेका लगी समस्ते अ शला।

अपनी संकरे पाससे कोरका धरिला,

पृ थबिता चतुर्भुजा मूर्तिका दे खला।"

उपरोक्त अंश का अर्थ है क महापुरुष शंकरदेव ने कीर्तनघर का निर्माण प्रारम्भ कया नीव रखने के लए स्वयं ही आकार का निर्धारण कया। तब दूसरे सभी लोग आगे आए। शंकरदेव ने वहाँ चार हाथों के साथ भगवान वष्णु की एक प्रतिमा देखी।

शंकरदेव के समकालीन क व, अनंत कंडाली ने 'मध्य दासम' में अपने जीवनी लेख में भागवत और सत्र के बीच निकट संबंध के बारे में उल्लेख कया। इसके अनुसार, यह माना जा सकता है क असम में भागवत ने सत्र के अर्थ में परिवर्तन में निर्णायक भू मका निभाई। उन्होंने लखा:

"रत्न पथका नाम, द् वजबरा अनुपमा,

अशीलनता कृष्णारा भकता,

तथा महा भगवता सस्ट्ररो अ शला सत्तर

सदाये सुनील साधुजन।"

उपरोक्त छंद सत्र नामक स्थान पर भागवत के वाचन और श्रवण के बारे में स्पष्ट संकेत देता है।

धा र्मक व भक्तिपूर्ण गति व धयों हेतु एक केंद्र की नींव रखने के लए प्रथम बार बोरदोवा में नामघर या कीर्तनघर के निर्माण में शंकरदेव के योगदान का पूर्व में ही उल्लेख कया जा चुका है। द् वजभूषण द्वारा संक लत जीवनी भी इस बात की पुष्टि करती है क शंकरदेव ने अपनी प्रथम तीर्थयात्रा से लौटने के बाद भक्ति क्रयाओं के निष्पादन हेतु सत्र-गृह का निर्माण कराया।

"देबागृहा पतिबोहो, तजु संगे ब सबोहो, च र्चबोहो कृष्णारा कथाका।"

पुनः,

"संकरे बोलंटा भाई, सुनियोका रमा राय,

देबोगृहा सजियो एतने;

हेना कथा सुनीलनता, सत्तर गृह सजिलानता,

रमा राय महारंगा मने। "

यह छंद भी राम चरण ठाकुर द्वारा ल खत जीवनी में मलता है ('चंद्र प्रकाश' और 'दत्ता बरुवा' द्वारा प्रका शत उनके संस्करण में)।

द् वजभूषण ने पुनः जोड़ा क शंकरदेव के प्रस्थान के पश्चात, माधवदेव ने ट ीकुची गाँव में एक सत्र क स्थापना की :

“तांतिकूची नाम ग्राम, सत्तर पटिलेका रंगे,

देवगृह नि र्मला तहिते।”

ले कन यह स्पष्ट नहीं है क क्या उन्होने 'देवगृह'के साथ 'मनिकूट'नाम का उपभवन बनवाया और क्या 'सत्रगृह'या 'देवगृह'शब्द समान अर्थ को इं गत करते हैं। यह स्पष्ट करने के लए वस्तृत अध्ययन व वश्लेषण की आवश्यकता है। द् वजभूषण 17वीं सदी के प्रथम अर्धांश में रहते थे।

रामा राय द्वारा ल खत 'गुरु लीला'कहती है क:

“सत्तर बं धबरा पाससे माटी दे खलंटा ,

दामोडोरो सही स्थान सत्तर बां धलंट।”

* * * * *

“एहिमाते दामोदरा सत्तर बां धलंटा ,

भक्तगण समां पाससे तथाका गैलनटा ;

बरजना भक्त शामें बसी अनुक्षण ,

परमा अनंदे गए हरिगुणगणा ”- गुरु लीला : पेज 39

इसके पश्चात दामोदरदेव ने कूच बिहार के तरुवा धाप या बैकुंठपुर नामक स्थान पर अपने सत्र की स्थापना की। इसके बारे में 'गुरुलीला'में निम्न प्रकार से उल्लेख कया गया है:

“पस्सिमें गारघाटा नदी अनुपम,

सत्तर नि र्मलानता टाइट तरुआ धाप नम।

चतुःसपस्से गाढ़ा नि र्मलानता भला करी

गरहर भीतर भइला बैकुंठ नागरि। ”

* * * * *

उपरोक्त ववरण नव-वैष्णव सत्रों के संरचनात्मक वन्यास का स्पष्ट चत्रण प्रस्तुत करता है। नामघर, मनिकूट, अ ववाहित शष्यों के लए आवास की चार पंक्तियाँ और परिसर से बाहर ववाहित धीशयों के लए अलग आवास, सत्र संकुल के चरों ओर म ी की सीमा और सत्र के द्वार निर्माण आदि के साथ सत्र की स्थापना उन दिनों में स्था पत सत्रों का सम्पूर्ण चत्र प्रस्तुत करती है।

यह जीवनी दामोदरदेव की मृत्यु के तीस साल बाद 17वीं सदी के दूसरे या तीसरे दशक में लखी गयी।

ऐसा प्रतीत होता है क सत्र का पूर्ण संरचनात्मक वकास और वस्तार केवल जीवनी लेखन के काल से हुआ। ले कन उससे पहले भ देव के समय में दोनों, वाह्य व आंतरिक दोनों संरचनाएं आकार ले रही थी जैसा क उनके में पाया जाता है, जहाँ उन्होने 'सरन मा लका'में एक श्रेष्ठ सत्र का स्पष्ट वर्णन कया जो निम्न प्रकार है:

“यात्राचरन्ति सद्धर्मं केवल भगवत्प्रियः ;

नवधा भगवत्भक्तिः प्रत्याहंग यात्रा वर्तये ;

तदसत्वुत्तमांग क्षेत्रंग वैस्नव सुरबंदितम् ,

तत्तरस्थ वैस्नव सर्बे हरी नामा परायणः।”

(स्थान जहाँ सर्वा धक ईमानदार लोगों और संतों ने कार्य कया गया वे ईश्वर को प्रय हैं और जहाँ भक्ति के नौ रूपों का प्रतिदिन अनुसरण कया जाता है उन्हे श्रेष्ठ सत्र कहा जाता है। सभी वैष्णव जो वहाँ ठहरते हैं, वष्णु की भक्ति में लीन रहते हैं।)

ले कन वैष्णव सत्र के कार्य केवल भक्ति प्रथाओं के नौ रूपों अथवा बारह या चौदह दिन के प्रार्थना व पाठ तक सी मत नहीं थे। इन संस्थाओं में, यह एक साहित्यिक, काला कार्य, संगीत, नृत्य, शास्त्र आदि का आयोजन तथा इन वषयों पर परिचर्चा का एक भाग मात्र था। वशेष रूप से शंकरदेव और माधवदेव के जीवन काल के दौरान, सत्र अपने एकाकी नाटक में अ भनय और बोरगीत गायन (शास्त्रीय गीत) के केंद्र बन गए। समय के साथ इन आ वष्कारों और तकनीकों को संस्कृति और धर्म के क्षेत्र में अपनाया गया, जिसने अ खल भारतीय मान्यता प्राप्त की। इस प्रकार 16 वीं सदी में, एक निरंतर उद् वकासीय प्र क्रया के बाद,'सत्र'शब्द ने अपने वास्त वक अर्थ को खो दिया और इसे सांस्कृतिक गति व धयों के केंद्र तथा भक्ति और धा र्मक कार्यों के संचालन के एक स्थान के रूप में मान्यता मली।

प्रख्यात वद्वान, डॉ. बिश्व नारायण शास्त्री ने कहा क वैदिक उत्पत्ति होने के बावजूद, 'सत्र'शब्द के असमी रूप की उत्पत्ति 'क्षेत्र'शब्द से हुई। वह खेत्रखात्रसत्र दिखा चुके हैं, ले कन इसकी अ धक

भाषाशास्त्रीय व्याख्या नहीं दे सके (असम सत्र महासभा के 2001 के गुवाहाटी सत्र की स्वागत कमेंटी के रूप में अध्यक्षीय भाषण)।

अनंत कंडाली के समकालीन बैकुंठ नाथ भागवत भ ाचार्य ने अपनी पुस्तक 'सरन-संग्रह में सत्र शब्द का वैष्णव अर्थ दिया जो शायद यथाति थ तक उपलब्ध शब्द की सर्वा धक प्राचीन परिभाषा है। उनकी परिभाषा निम्न प्रकार से पढ़ी जा सकती है:

सत्र वह है, जहां भक्ति के नौ रूपों में ईश्वर की पूजा की जाती है और जहां वैष्णव रहते है और ईश्वर की प्रसंशा में मंत्रों को गाते हैं ।

उपरोक्त परिभाषा से यह माना जा सकता है क भ देव द्वारा उल्लि खत 'सत्र'केवल भक्ति के नौ रूपों के अनुशरण का केंद्र नहीं था बल्कि यह भक्तों का निवास स्थान भी था। भ देव के समकालीन द् वजभूषण ने उल्लेख कया क शंकरदेव ने सत्र-गृह की स्थापना भक्ति कार्यों के निष्पादन के लए की। यद्य प द् वजभूषण ने सत्र-गृह को परिभा षत नहीं कया। हो सकता है क द् वजभूषण, रामचरन व अन्य ने शंकरदेव द्वारा भागवत पाठ और दूसरे धा र्मक कार्यों के लए नि र्मत प्रार्थनाघर को देव-गृह या सत्र-गृह कहा हो। शब्द 'म णकुट'जहां देवी-देवताओं की मूर्तियाँ खड़ी की गयीं, शंकरदेव के काल के बाद की पुस्तकों में मलता है। शंकरदेव के धा र्मक वश्वास के प्रसार के आरंभ से ही मूर्तियों के अस्तित्व तथा मूर्तियों व प वत्र पुस्तकों को अलग घर में वेदी पर रखने के व्यवस्था को मानते हुए हम आसानी से शंकरदेव के काल में 'नामघर'व 'म णकुट'के अस्तित्व को आसानी से सुनिश्चित कर सकते हैं। हटी (शष्यों के घरों की पंक्तियाँ), व भन्न कार्यालय पदा धकारी, गुरु-कर (गुरुओं द्वारा शष्यों पर लगाया गया कर), गाव में लोगो के साथ समन्वय स्था पत करने वाले अ धकारी, और सत्र का प्रशासन देखने वाले व भन्न पदा धकारी शकरदेव के समय में नहीं पाये जाते थे। दूसरे शब्दों में, सत्र प्रबंधन के व भन्न आयामों के वकास को अभी भी आकार लेना था। क्या ये पहलू औपचारिक आकार ले चुके थे, शंकरदेव के प्रत्यक्ष उत्तरा धकारी और धा र्मक प्रमुख, माधवदेव को शंकरदेव की मृत्यु के बाद पतबौसी सत्र के अ धकार सौपे गए थे। ले कन माधवदेव ने पर्दे के पीछे से संचालन कया, पहले गानक-कुची और फर सुंदरी डया से वैष्णव धा र्मक आंदोलन का नेतृत्व कया। यदि पतबौसी में शंकरदेव द्वारा स्था पत सार्वभौ मक सत्र होता तो महापुरुष की मृत्यु के बाद उनकी पत्नी और पारिवारिक सदस्यों को वत्तीय कठिनाई और अन्य मुश्किलों का सामना न करना पड़ता।

यह इस लए निश्चित है क कीर्तन घर (प्रार्थना घर) को बचाने वाले दूसरे अंगों का वकास शंकरदेव के जीवन काल में नहीं हुआ था। उनकी मृत्यु के पश्चात, माधवदेव ने बरपेटा सत्र की स्थापना की और नाम कीर्तन आदि के लए व्यस्थित प्र क्रया को लागू कया। और अ ववाहित शष्यों के लए अलग आवास

रखने के लए आवश्यक कदम भी उठाये। यहाँ तक की उन्होने जलाऊ लकड़ी और खाद्य पदार्थों आदि के लए अलग स्टोर की व्यवस्था को भी सुगम बनाया और सत्र की आय के स्थायी स्रोत का मार्ग प्रशस्त कया। उन्होंने नए सरे से बरपेटा कीर्तन घर को नया रूप दिया। तब उन्होंने अपने शष्यों को सत्र की ज़िम्मेदारी सौपकर लोकतान्त्रिक प्र क्रया की शुरुआत की और मथुरादास बूढ़ा अता को सत्र के शष्यों के नेता के रूप में खड़ा कया। यहा हम सत्र नमक संस्था के वकास में सरहनीय योगदान के लए दामोदर देव का नाम भी ले सकते हैं। प्रख्यात जीवनीकार राम राय ने दामोदरदेव की मृत्यु के तीस साल बाद उनकी जीवनी 'गुरु लीला लखी। दामोदरदेव द्वारा स्था पत बैकुंठपुर सत्र के ववरण के अनुसार, सत्र के चारों ओर भू-सीमा खड़ी करने के अलावा सत्र नामघर, म णकुट, शष्यों के लए चार पंक्तियों के आवास (हटी) के साथ पूर्ण हो चुका था। सत्र संकुल के बाहर स्थित आवासीय क्षेत्र ववाहित शष्यों के रहने के लए आवंटित कए गये थे। एक सुंदर बाट-सोरा (द्वार) सत्र के प्रवेश द्वार पर खड़ा कया गया गया था। जैसा क गुरु-लीला में उल्लेख कया गया है क दामोदरदेव क कामरूप से कूच-बिहार तक क यात्रा में उनके 6 शष्यों ने उनका साथ दिया। जब क पतबौसी में दामोदरदेव ने इतने सुंदर और चक्षु प्रय नामघर का निर्माण कराया क उनका सत्र देखने के लए बड़ी संख्या में लोगों का तांता लग गया। यह इस कारण था क्यो क नारायण ठाकुर ने बार-बार अपने शष्यों का ध्यान बारपेटा सत्र के पुनर्निर्माण और इसे शानदार रूप देने की ओर आकृष्ट कया जिससे यह सत्र भी लोगों का ध्यान आकृष्ट कर सके। इसके अतिरिक्त, दामोदरदेव ने अपने शष्यों द्वारा गुरु-कर (गुरु को चुकाया जाने वाला) चुकाने की व्यवस्था की शुरुआत की।

सत्र नामक संस्था के वकास के द् वतीय चरण की शुरुआत 17वीं सदी के चौथे दशक में हुई ।

अहोम शा सत राज्य में बहुत सी कठनाइयों का सामना करने और पुराने राजा के उग्र क्रोध का सामना करने के बावजूद, बंशीगोपालदेव ने अपने गुरुओं की इच्छाओं का सम्मान करते हुए, उस समय असम में बहुत से सत्रों की स्थापना की जब वह उस क्षेत्र में धर्म के प्रसार के लए थे। रामानन्द के अनुसार, कालाबारी सत्र में सबसे पहले, व भन्न कर्मकाण्डों के दिन में तीन बार संचालन के लए तीन मुख्य अ धकारियों के अतिरिक्त बंशीगोपालदेव ने रत्नाकर कंडाली को 'भगवती', अनिरुद्ध भुइयाँ को 'पाठक', आठ दूसरे सहायकों के साथ यदुमनी को मुख्य गायक (ओझा), 5 श्रवनियों (श्रोताओं) और 12 सहायकों के साथ एक मुख्य पुजारी की नियुक्ति की। इसका भी उल्लेख है क दो अन्य अ धकारी खाद्य संग्रह और शष्यों द्वारा चढ़ाये जाने वाले चढ़ावे के प्रबंधन और तीसरा अ धकारी सत्र के स्टोर से निकाले गए समान और उपभोग का लेखा-जोखा रखने के लए नियुक्त कया गया था। अलग-अलग वभागों के प्रमुख के रूप में अलग-अलग अ धकारियों की नियुक्ति की व्यवस्था सत्र के प्रबंधन और संगठन में बंशीगोपालदेव की दक्षता का स्पष्ट प्रदर्शन है। रामानन्द की पुस्तक पुष्टि करती है क उन्होने सत्र परिसर में 500 शष्यों

के रहने क क्षमता के साथ कुरुआबही में एक सत्र का निर्माण कराया। वे सखों की तरह लंगर की व्यसथा का अनुपालन नहीं करते थे।

शाही संरक्षण और मान्यता सत्र के वकास की प्र क्रया का तीसरा चरण कहा जा सकता है। कर रहित भू म और श्रम के रूप में शाही मान्यता और सहयोग ने उनकी आ र्थक स्थिति सुदृढ़ करने में मदद की, इसी ने उनमें से कुछ को राजसी ठाठ से रहने के लए प्रेरित कया। इस प्रकार हम पाते हैं क निर्माण की अवस्था में सत्र नामक संस्था ने वर्तमान स्वरूप धारण नहीं कया जो क एक लंबी और धीमी वकासात्मक प्र क्रया का हिस्सा है। ले कन महापुरुष शंकरदेव ने इसके बीज डाल दिये थे।

सत्र का वर्गीकरण :

यद्य प संरचनात्मक प्रतिरूप, संगठनात्मक और प्रशासनिक व्यवस्था एक सत्र से दूसरे सत्र में परिवर्तनशील है , ले कन उनके कार्यों में कुछ समानता भी है। यह स्वाभा वक है क अ ववाहित, ववाहित, अर्ध ववाहित शष्यों के निवास स्थान, सांगठनिक व प्रशासनिक व्यसथा के संबंध में उनके बीच कुछ अंतर हैं। ले कन नामघर (प्रार्थना घर) और म णकुट (बेदी घर) के निर्माण के मामले में लगभग सभी सत्र समान प्रतिरूप का अनुसरण करते हैं। उनकी उत्पत्ति के अनुसार, सत्र, परिसर के अंदर सत्रा धकार और डेका सत्रा धकार के रहने के लए ह ी और आवास उपलब्ध कराते हैं। यह समझा जा सकता है क सभी सत्र समान वर्ग में नहीं हैं। उनके लक्षणों के आधार पर सत्र को तीन समूहों में वर्गीकृत कया जा सकता है – (1) मठवासीय (2) अर्ध-मठवासीय (3) गैर मठवासीय , उनकी कार्यप्रणाली के आधार पर। ऐसे सत्र, जो केवल अ ववाहित शष्यों को परिसर के अंदर निवास करने की अनुमति देते हैं, उनके ववाहित जीवन पर प्रतिबंध लगते है, महिलाओं के रात्रि निवास की अनुमति नहीं देते हैं और जहां ईश्वर की प्रार्थना और उसकी पूजा ही शष्यों का मुख्य धा र्मक एजेंडा है, मठवासीय या बिहार प्रकार के सत्र कहलाते हैं। जो उल्टी दिशा में ववाहित लोगों और ब्रह्मचारी शष्यों के लए आवास रखते है, और जहां सत्रा धकार और उसका नायब (डेका अ धकार) सहित मुख्य पदा धकारी मठ की जीवनचर्या का नेतृत्व करते हैं, वह अर्धमठासीय सत्र कहलाता है। ले कन वे सत्र जो ववाहित जीवन पर प्रतिबंध नहीं लगते हैं और कसी अन्य व्यक्ति की तरह ववाहित गुरु सामाजिक जीवन का नेतृत्व करते हैं और फर भी आम जनता के बीच धा र्मक कार्यों का प्रसार करते हैं, तीसरी श्रेणी में शा मल कए जा सकते हैं। औनियाती और द क्षणपत जैसे सत्र प्रथम श्रेणी में शा मल हैं; बरपेटा सत्र दूसरी श्रेणी में शा मल हैं जब क अन्य सभी सत्र तीसरी श्रेणी में शा मल कए जा सकते हैं। ब्रह्मचर्य और पूर्ण रूप से भक्तिमय जीवन जीने के कारण प्रथम श्रेणी की तुलना बौद्ध और जैन मठों से की जा सकती है यद्य प वे एक ही रसोईघर से भोजन लेने की व्यवस्था का पालन नहीं करते जैसा क बौद्ध और जैन मठों में पाया जाता है। इन मठों

में रहने वाले शष्य अपने भोजन का प्रबंध व्यक्तिगत रूप से करते हैं। वे सखों की तरह लंगर लेने की व्यवस्था को नहीं अपनाते।

कुछ जीवनीकार सत्र का वर्गीकरण उत्पत्ति, प्रा धकार और प वत्र ज्योति के प्रकाश के आधार पर तीन समूहों में करते हैं। जब एक शष्य या एक उपासक गुरु की अनुमति से एक अलग सत्र की स्थापना करता है तो उसका सत्र प्रा धकृत सत्र कहा जाता है। दूसरी श्रेणी उन सत्रों को शा मल करती है जो गुरुओं की संतानों द्वारा, सत्र की प वत्र वस्तुओं का एक हिस्सा लेकर, समान या अलग नाम से स्था पत कए जाते हैं। तो ऐसे सत्रों को जालाबंती या शाखा सत्र कहा जाता है।

सत्र में कार्य करने वालों की व भन्न श्रे णयाँ:

सत्र में कार्य करने वाले अ धकारियों को मुख्य रूप से तीन श्रे णयों में वभाजित कया जा सकता है : (1) अ धकार या बूढा सत्रिया और डेका-अ धकार या डेका सत्रिया; (2) अन्य कार्यालय पदा धकारी; (3) शष्य। अ धकार सत्र में मुख्य कार्यालय पदा धकारी है। उसकी तुलना ईसाई मठ के प्रमुख या हिन्दू मंदिर के मुख्य पुजारी से की जा सकती है। वह मुख्य गुरु और मुख्य कार्यालय पदा धकारी होता है जो सत्र की धा र्मक और प्रशासनिक गति व धयों की देखभाल करता है। दीक्षा संस्कारों के प्रशासन, पुजा पद्धति और उन्हे अवतार रूप प्रदान करके वह अपने शष्यों को धर्म का सही मार्ग दिखाता है। डेका धकार (उपप्रमुख) अ धकार से ठीक अगला पद धारण करता है और समय समय पर अ धकार को प्रदत्त कार्यों को करता है। समान्यतया अ धकार की मृत्यु के पश्चात वह उसका उत्तरा धकारी होता है। दूसरा समूह उन ब्रह्मचारियो से बनता है जो सत्र परिसर के अंदर अपने निश्चित आवास में रहते हैं, उनमें से कुछ कार्यालय पदा धकारी की ज़िम्मेदारी धारण करते हैं और पूर्ण रूप से धा र्मक कार्यों में लीन रहते हैं। रामानन्द के अनुसार, अपने जीवन के अंतिम दिनो में कई ववाहित शष्यों ने भी सांसारिक मामलों से सन्यास लेकर ब्रह्मचारियों की तरह समय व्यतीत कया। केवल मठाशीय सत्रों में ब्रह्मचारी शष्य कार्यालय पदा धकारी बनाए जाते हैं और वे प्रबंधकीय कार्यों में सत्र के सत्रा धकार और डेका-सत्रा धकार की सहायता करते हैं। ववाहित शष्य सत्र क्षेत्र की तीसरी श्रेणी में शा मल कए जाते हैं। सामान्यतया वे अंतरंग रूप से सत्र के कार्यों में शा मल नहीं होते हैं। गुरुओं या अ धकार द्वारा उनकी दीक्षा के पश्चात ये शष्य गांवों या शहरों में ववाहित जीवन व्यतीत करते हैं, फर भी गुरुओ द्वारा बताए गए धा र्मक निर्देशों का पालन करते हैं। केवल वशेष अवसरों पर वे सत्रा धकार और सत्र के संपर्क में आते हैं।

सत्र प्रशासन:

सत्र की प्रशासनिक या प्रबंधकीय व्यवस्था उनकी प्रकृति पर निर्भर करती है। गैर मठाशीय सत्रों में प्रशासनिक व्यवस्था अपने सम्पूर्ण स्वरूप में नहीं पाई जाती है। वे नामघर तथा म णकूट में धा र्मक सेवाएँ देने और उनके शष्यों के साथ समन्वय स्था पत करने के लए केवल कुछ पदा धकारी रखते हैं। ऐसे अ धकांश सत्रों में आवासों की पंक्तियाँ नहीं होतीं इस लए उनके सामने ऐसी प्रबंधकीय समस्याएँ नहीं आतीं। ये सत्र पूरे वर्ष कोई न कोई उत्सव मानते रहते हैं। इसके अलावा ये सत्र महापुरुष या दूसरे गुरुओं की पुण्यति थ पर और केवल उत्सव के अवसरों के दौरान एक दिन में 12 या 14 बार धा र्मक क्रयाओं को करते हैं। इन सत्रों में प्रशासनिक सख्तियां सत्रा धकार और सत्रा धकार के निर्देश पर अपने कर्तव्यों को करने वाले अन्य कार्यालय पदा धकारियों में निहित होती हैं। दूसरी तरफ मठाशीय सत्र की प्रशासनिक व्यवस्था भन्न है। उनकी नित्य प्रार्थनाएँ और कर्मकांड स्पष्ट तथा पूर्वप्रच लत हैं। प्रशासनिक और प्रबंधकीय व्यवस्थाओं के अपनी खास वशेषता होती है। यह प्राकृतिक ही है क ये उनसे भन्न होती हैं जिनका अनुशरण गैर- मठासीय सत्रों में होता है। ऐसे बिहार प्रकार के सत्र में मुख्य, उप, और सहायक प्रकार के कुछ पदा धकारी होते हैं जो सत्रा धकार के निर्देशों के अनुपालन में निम्न प्रकार से सत्र प्रशासन और वभागों को चलाते हैं:

(1) म णकूट संभाग: सभी प्रकार के कार्य जैसे देवी-देवताओं क पूजा इस अनुभाग के अ धकारियों को सौंपे जाते हैं। मुख्य देवरी (मुख्य पुजारी) इस अनुभाग का प्रमुख होता है। उसे उप और मांग के अनुसार एक या अ धक सहायक उपलब्ध कराए जाते हैं।

(2) नामघर संभाग : वहाँ नाम-प्रसंग प्रद र्शत करने, प वत्र पुस्तकों का पाठ, मंत्रों और गीतों का गायन, खोल व ताल जैसे संगीत वाद्य-यंत्रों को बजाने क ज़िम्मेदारी के साथ दो या कुछ अ धक अ धकारी नियुक्त कए जाते हैं। बोर- भगवती (मुख्य पाठक) और बोर- नामलागोवा (मुख्य दीक्षक) के अतिरिक्त वहाँ देव लया भगवती (उप-पाठक), पाली भगवती (सहायक पाठक), सरु- नामलागोवा (कनिष्ठ पाठक), गाता हुआ नटुआ (गायक और नर्तक), संगीत वादक, गायक और सूत्रधार आदि पदा धकारी नामघर के व भन्न कार्यों के संचालन के लए थे।

(3) कोषागार संभाग :इस संभाग का नेतृत्व व संचालन कोषाध्यक्ष द्वारा कया जाता है। उसे बोर-मजीनदार बरुआ या बोर- ककोती भी कहा जाता है। और वह शष्यों से प्राप्त वस्तुओं; सत्र की भू म सम्पत्तियों से प्राप्त आय और भक्तों व अन्य लोगों द्वारा दिए गए दान से प्राप्त धन का वस्तृत लेखा-जोखा रखता था। बड़े सत्रों में कोषाध्यक्ष के अधीनस्थ कुछ सहायक भी होते थे।

(4) खाद्य संग्रह : इस संभाग की देखभाल मुख्य संग्रहपाल (मुख्य भाराली) द्वारा की जाती है। वह खाद्य पदार्थों जैसे सत्र की कर-रहित भू म पर खेती करने वालों से प्राप्त चावल और धान; और नमक व बाजार से लाए जाने वाले तेल का पूरा लेखा-जोखा रखने के लए जिम्मेदार है। संग्रह के प्रबंधन के लए कुछ और सहायकों के अतिरिक्त वह भेंटी-धारा (चढ़ावे का प्राप्तकर्त्ता), मठोई भाराली (मीठे सामानों का प्रभारी संग्रहपाल), गुआ भाराली (सुपारी और पत्तों का संग्राहक), लोन भाराली (नमक का संग्राहक) जैसे कई अ धकारी रखता था।

सत्र के व भन्न वभागों के प्रमुख जैसे औनीयति, द क्षणपत और कमलाबारी सबसे सम्मान पाते थे, जिसके लए उन्हे बोर- मनोइस (प्रमुख सम्माननीय पदा धकारी) कहा जाता था। औनीयति सत्र में ऐसे सात पदा धकारी होते थे और इसी लए उन्हे सत-मनभागीयस भी कहा जाता है। सत्रा धकार प्रायः उनसे सत्र के प्रशासनिक वषयों पर वचार- वमर्श भी कया करते थे। सत्र पदा धकारियों के भरण- पोषण के लए धन का आवंटन सत्रा धकार द्वारा स्वयं कया जाता है ले कन जब महंगे अवसरों पर अ धक धन निकालना पड़ता है तो वह अपने मुख्य कार्यालय पदा धकारियों से वचार- वमर्श करता है।

(5) लोक-संबंध वभाग : सत्र के अ धकांश शष्य सत्र से दूर-दराज के स्थानो में रहते हैं। छोटे सत्र के मामले में उनके शष्य सत्र के पास-पड़ोस के क्षेत्र में रहते हैं। ले कन जिनके अनुयायियों की संख्या बहुत बड़ी और दूरस्थ स्थानों तक फैली होती है, उन सत्रों का उनके साथ संपर्क बनाए रखने के लए व भन्न क्षेत्रों में एक बोर-मेंढ़ी या एक राज-मेंढ़ी (मुख्य या प्रमुख समन्वय अ धकारी) की नियुक्ति की जाती है। ये समन्वय अ धकारी कई मामलों में अपनी सहायता के लए पाखी-मेंढ़ी और पचनीस (दूत) जैसे कुछ अ धनस्थों की नियुक्ति करते हैं। ये अ धकारी अपने शष्यों से मलने के लए शहर (गाँव) के दौरे पर जाने वाले सत्रा धकार और सहयो गयों के रहने की व्यवस्था करते हैं। इन अ धकारियों को कुछ अन्य कर्तव्य जैसे शष्यों से प्राप्त देयताओं और उनके योगदान को इक ा करना और उसे सत्र के कोषागार में जमा करने जैसे दायित्व सौंपे जाते हैं।

(6) शाही घराने के साथ संबंध : 16वी सदी के अंत तक सत्र की संख्या बढ़नी शुरू हो गयी तथा 17वीं सदी तक संख्या में कई सौ तक की वृ द्ध हो गयी थी। जब कई शष्यों ने सत्र की सेवाओं और कर्मकांडों के नाम पर राज्य के कर्तव्यों को निभाने से छूट मांगी तो राजा रुद्र संह ने सत्रों की वास्त वक संख्या निर्धारित करने के लए एक जनगणना करवाई। राजा की मान्यता प्राप्त करने के बाद सत्र के गोसाई (गुरु) को एटका महंत (एक रुपया महंत अर्थात सम्पूर्ण गुरु) कहा गया। ले कन यह ज्ञात नहीं है क कतने सत्रों में एटका महंत थे। यदि ऐसे सत्रों की गणना कारी (समुद्री कौ ड़याँ जो उस समय सक्के की तरह प्रयोग क जाती थीं) के परिपेक्ष्य में की जाए तो संख्या 1280 होगी। यदि एक रुपये की कीमत पाई या पैसे के रूप में आंकी जाए, तब यह संख्या इतनी बड़ी नहीं हो सकती। ले कन बाद वाली व ध उस

समय प्रच लत नहीं थी। संभवतः उस समय से ही नए सत्रा धकार को खड़ा करने के लए शाही अनुमति आवश्यक हो गई और अपने (सत्रा धकार) अनुक्रम व प्रास्थिति के क्रम में नए राजा को आशीर्वाद देने के लए सत्रा धकार के शाही राज्या भषेक समारोहों में उपस्थित रहने के चलन की शुरुआत हुई। शाही घरानों के साथ संबंध बनाए रखने के क्रम में बड़े सत्रों ने खतोनियार (अ भभाषक) और मुख्तियार (प्रवक्ता) आदि पदों की नियुक्ति की और धीर- धीरे ऐसी संस्थाओं के साथ संपर्क बनाए रखने के लए राजा ने यही कार्य देव लया बरुआ (मंदिर अ धकारी) और सत्रीय बरुआ (सत्र के साथ समन्वय स्था पत करने वाला अ धकारी) जैसे पदा धकारियों की नियुक्ति करके कया।

सत्र की आय के मुख्य स्रोत

अहोम राजाओं द्वार दान में दी गयी कर-मुक्त भू म सत्र की आय का मुख्य स्रोत हुआ करते थे। ऐसी भू म पर कृ ष-कार्य करने वाले काश्तकारों से अपनी उपज का एक भाग सत्रों को देने की अपेक्षा की जाती थी। प्रमाणों के अनुसार अंग्रेज़ शासकों ने भी सत्रों को कर-मुक्त भू म की अनुमति देना जारी रखा। धनी सत्रों के पास इस प्रकार की कर-मुक्त अचल संपत्ति का बड़ा क्षेत्र था। जिला गजट द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों के अनुसार औनीयति, द क्षणपत, कमलाबारी और बेंगेनाती सत्रों के पास ऐसी कर-मुक्त भू म क्रमशः 21000, 10000, 5900 और 2500 एकड़ थी। आजकल सरकार द्वारा भू म के कुछ भाग के अ धग्रहण और काश्तकारों द्वारा अपनी उपज का एक भाग देने की व्यवस्था छोड़ देने के कारण सत्रों की आय के स्रोत तेजी से कम हो रहे हैं। अ धकांश गैर मठाशीय सत्र कर-मुक्त भू म नहीं रखते और यदि उनमें से कुछ रखते भी हैं तो यह माप में बहुत छोटी है। सत्र की आय के अन्य स्रोत हैं: (अ) शष्यों द्वारा चुकाई गयी देयताएं ,(ब) दर्शन करने वाले भक्तों द्वारा दिया गया चढ़ावा ,(स) वशेष अवसरों और समारोहों पर शष्यों पर लगाया गया चंदा ,(द) अनुदान ,(य) अपने पुत्रों और पुत्रियों के ववाह के अवसर पर या परिवार में कसी की मृत्यु पर शष्यों द्वारा दिया गया धन व सामान। समय गुजरने के साथ सत्र के प्रति शष्यों के सम्मान और भक्ति में तेजी से कमी आ रही है और इसी लए सत्र की आय के स्रोत में भी। इसने गैर मठाशीय सत्रों को आय के दूसरे साधन तलाशने के लए बाध्य कर दिया है।

सत्रा धकार का चयन :

सभी सत्र अपने अ धकार के चयन में समान प्र क्रया का अनुसरण नहीं करते। मठीय सत्रों में वो लड़के जिनके शरीर पर मंगलसूचक चन्ह होता है, उन्हे गैर-मठीय सत्रों से उनके बाल्यकाल में ही चुन लया जाता है और उन्हे सभी धा र्मक कार्य सखाए जाते हैं तथा भ वष्य में सत्रा धकार अथवा डेका-सत्रा धकार के कार्यालय को संभालने के लए तैयार कया जाता है। ऐसे प्रत्येक मठीय सत्र का एक या अ धक गैर-मठीय सत्रों से संबंध होता है, जहां से उ चत समझे गए लड़के चुने जाते हैं। समान्यतया , ये दायित्व

सत्रा धकार को दिया जाता है क वो ऐसे संभा वत उत्तरा धकारी को चुने। यही कारण है क मठीय सत्रों में अ धकार और उसके नायाब के अतिरिक्त पर्याप्त संख्या में ऐसे उपासक रखे जाते हैं। इन युवाओं में से एक सत्रा धकार की मृत्यु के बाद डेका-अ धकार का पद प्राप्त करता है, और डेका-अ धकार प्रायः उसका उत्तरा धकारी बनता है, यदि उसके उत्तरा धकार के वरुद्ध कोई कारक न हो। अ धकार के जी वत रहते ही डेका-अ धकार का चयन एवं अलंकृत कया जाता है। कुछ सत्र, वशेषतः गैर-मठीय सत्रों में सत्रा धकार एवं डेका-अ धकार का चयन उनकी वशेषताओं और ज्ञान के आधार पर होता है। कुछ सत्रो, जैसे बारपेटा में शष्य मतपत्र द्वार डेका-अ धकार कार्यालय के लए उ चत व्यक्ति का चयन करते हैं, जो व्यवस्था वहाँ एक लंबे समय से चल रही है।

सत्र संपत्ति का स्वा मत्व :सत्र चल एवं अचल दोनों संपत्ति रखते हैं। अ धकतर गैर-मठीय सत्रों में वंश में सबसे बड़ा व्यक्ति ऐसी सम्पत्तियों का स्वामी बन जाता है। कई सत्रों में ऐसी सम्पत्तियों को उनके देवताओं के नाम पर रखा जाता है और सत्रा धकार व डेका-अ धकार को उनका न्यासी बनाया जाता है। उदाहरण के लए, अनुयाती सत्र में राजा अहोम से प्राप्त कर-मुक्त भू म व श्र मक को गो वंदा (सत्र के देवता) के नाम पर रखते हैं और अ धकार सत्र का व्यवस्था संचालन देवता के नाम पर करता है। कुछ अन्य सत्रों, वशेष रूप से बारपेटा सत्र में, सत्र के सभी शष्यों के पास ऐसी सम्पत्तियों का सामूहिक स्वा मत्व होता है। अ धकार के पास संचालन या अपनी इच्छा के अनुसार कसी को स्वा मत्व सौपने की शक्ति नहीं होती है।

सत्र की प्रथाएँ और धा र्मक सेवाएँ :

सामान्यतया रूढ़िगत और धा र्मक कार्यों तथा कार्यप्रणा लयों को दो भागों में वभाजित कया जा सकता है जो हैं- नित्य-प्रतिदिन व आवसरिक। नित्य कार्यों में नाम-प्रसंग शा मल है जिसकी संख्या महापुरुष के सत्र में 14 और दामोदर सत्र में 12 है। उनके संबन्धित समूहों के आधार पर संख्या भन्न भन्न हो सकती है। सुबह ,दोपहर के बाद और शाम को प्रार्थनाएँ की जाती है और समूहिक रूप से उन्हे 14 या 12 प्रसंग कहा जाता है। प्रसंग में नाम -प्रसंग ,भागवत का पाठ, घोस; बोरगीत और अन्य धा र्मक गीतों का गायन; भटिमा (मंत्रों) के साथ ईश्वर की स्तुति आदि जैसे कार्यवृतियाँ शा मल होती है। सभी सत्रों में एक जैसी व्यवस्था या दिनचर्या का अनुपालन नहीं कया जाता है। उनकी संबन्धित समूहों के आधार पर सत्रों के मध्य महत्वपूर्ण भन्नता पाई जाती है। यहाँ तक की एक ही समूह में कुछ सत्र एक दूसरे से भन्न होते है कुछ सत्र स्वर चत गीतों पर ज़ोर देते हैं जिन्हें वे अपनी दिनचर्या में शा मल करते है। पुनः सभी सत्र, वशेष रूप से गैर मठासीय सत्र पूरी कार्यवृत्ति का पालन नहीं करते है बल्कि ऐसा वशेष अवसरों पर करते हैं।

वशेष अवसर पर होने वाले कार्यक्रमों में जन्माष्टमी, रास-यात्रा, होली आदि जैसे त्यौहार शा मल होते हैं और कुछ सत्रों में झूला- यात्रा और रथ- यात्रा भी इस सूची में शा मल कए जाते हैं। दामोदरदेव के समूह अथवा ब्रह्मसंगति (ब्राह्मण समूह) से संबद्ध रखने वाले सत्रों में नारायनसयन (भगवान नारायण का शयन), पार्श्वपरिवर्तन और उत्थान (आयामों में परिवर्तन और उदय) जैसे त्यौहार भी इस सूची में मलते हैं। बरपेटा सत्र डोल-उत्सव (होली का त्यौहार)और औनीयती सत्र का पल-नाम पूरे असम में प्र सद्ध है। इन कार्यकर्मों के अतिरिक्त सत्र महापुरुष और अपने संस्थापकों की पुण्य ति थ भी मानते है।बरपेटा में शंकरदेव की पुण्य ति थ 10 दिन के कार्यक्रम के साथ और माधवदेव की पुण्य ति थ 12 दिन की कार्यवृत्ति के साथ मनाई जाती है।

ब्राह्मण समूहों के सत्रों में वष्णु या नारायण की मूर्ति की पूजा उनके दिन-प्रतिदिन के कार्यक्रम का एक भाग है। यह उनकी 12 या 14 बार की कार्यवृत्ति का एक भाग नहीं है। पुजारी, देवरी, सहायक, पुष्प-पूर्तिकर्ता आदि जन्मजात अपनी भू मका में होते हैं। सामान्य तौर पर जारण और भजन (धर्म के परिचय के दो चरण) देवी-देवताओं के समक्ष निष्पादित कए जाते हैं। सत्र के अन्य समूहों में मूर्तियों की महत्ता इतनी अ धक नहीं है, यद्य प उनके पास मूर्तियाँ हो सकती हैं। सर्वा धक प वत्र पुस्तकों (शास्त्र) में से एक जैसे कीर्तन, दसमा, घोष और रत्नावली आदि दो महापुरुषों द्वारा लखी गयी थी, ये आसन (संहासन) पर रखी जाती है। जिसके सामने अन्य समूहों से संबन्धित सत्रों में दीक्षा प्र क्रया सम्पन्न की जाती है। शष्यों को दीक्षा देने का कार्य गुरु या सत्रा धकार द्वारा स्वयं सम्पन्न कया जाता है। ईश्वर के चरणो में शरण लेने के पश्चात नाम (प वत्र प्रार्थना), गुरु और भक्त दीक्षकार्य के पीछे मुख्य व्यक्ति होते हैं। दीक्षा संस्कार के बाद गुरु उच्च स्तर तक भक्तिमय अनुयायियों को जाप-माला प्रदान करते हैं और उनके सम्मुख मंत्रोच्चार (प वत्र सूत्र) करते हैं। दामोदर के मार्ग का अनुसरण करने वाले सत्र में पूजा की ये दोनों पद्धतियाँ प्रचलन में हैं- 1॰ तांत्रिक ,2॰ वैष्णवमार्ग से भक्ति में लीन हो जाना। ये सत्र अपने शष्यों को अष्टाक्षरी (8 अक्षर), द्वादक्षरी (12 अक्षर) और अन्य वष्णु-मंत्रों की परंपरा जारी रखे हुये हैं। महापुरुष की परंपरा का अनुसरण करने वाले सत्रों में उनकी दीक्षा (जारण) के समय शष्यों के सम्मुख देवी-देवताओं के चार नामों के महत्व की व्याख्या की जाती है।

सत्रों का सामाजिक योगदान :

सत्र असमी समाज के लए पछले चार सौ सालों से अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। वे असम के कोने-कोने में रहने वाले लोगों के मध्य एकता के बंधन को मजबूत करते रहे हैं। जिला गज़ट में उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार गोलपाड़ा, कामरूप, दारांग, नगाँव, सवसागर,और लखीमपुर जिलों के क्रमश: 90, 98, 72, 90, 68 तथा 62 प्रतिशत लोग वैष्णव समुदाय से संबंध रखते हैं। मध्यकालीन युग में और आज भी

धा र्मक बंधन लोगों के मध्य एकता लाने में सहायता करता है। पूरी ब्रह्मपुत्र घाटी में सत्रों की स्थापना द्वारा महापुरुष और अन्य वैष्णव गुरुओं ने अपनी प वत्र पुस्तकों के माध्यम से असमी भाषा और साहित्य को स्था पत करने में निश्चित रूप से यादगार भू मका निभाई। सत्र ऐसे केंद्र थे जहां से वैष्णव साहित्य ने व्यापक प्रसार पाया। सत्रों ने लोगों को नैतिक व आध्यात्मिक ज्ञान देकर श क्षत कया जिससे वे अच्छा जीवन-स्तर पा सकें। लोगो ने सीखा क कैसे सफाई, सदुपयोग, सद्चरित्र , बुरी आदतों के ऊपर नियंत्रण, शष्टाचार, ईश्वर के प्रति भक्ति, आस्तिकता, जीवन-पद्धति और अंततः आत्मा की प वत्रता को बनाए रखा जाए। इस प्रकार सत्रों ने पूर्व में संपूर्णता के साथ प्रामा णक रूप से नैतिक और आध्यात्मिक उच्चीकरण में बहुत महत्वपूर्ण भू मका निभाई। निम्न जातियों और द लत समुदायों तथा जनजातियों से संबन्धित बहुत से लोगों को धर्म में शा मल करके वैष्णव गुरुओं ने उनके लए नियंत्रित और प वत्र जीवन का मार्ग खोल दिया। सत्र के इन कार्यों ने न केवल हिन्दू समाज का पोषण कया अ पतु समग्र रूप से असमी समाज के निर्माण और वकास में व्यापक रूप से योगदान दिया। इस परिपेक्ष्य में लंबे समय से उपे क्षत द लत व जनजातीय लोगों के उत्थान में कालसंगति समूह (सत्र के चार समूहों में से एक) के सत्रो द्वारा निभाई गई भू मका वशेष रूप से उल्लेखनीय है।

भारत के अन्य राज्यों की तुलना में असम में जातीय भेदभाव और छूआछूत का दुष्प्रभाव कम है।सामान्यतया केवल ववाह के अवसर पर जातीय कारक देखा जाता है, ले कन अन्य सामाजिक प्र क्रयाओं में नहीं। इस तुलनात्मक दृष्टिकोण का श्रेय सत्रों के सभी के साथ बराबरी का व्यवहार करने को दिया जा सकता है। सत्रों ने कुछ परम्पराएँ बिना कसी आरक्षण के अपनाई जो समाज में काफी लंबे समय से प्रच लत थी। उदाहरण के लए असम में वैष्णवों द्वारा मछली और मांस पर कोई पाबंदी नहीं लगाई जाती है जब क अन्य राज्यों में वैष्णव इसको मना करते हैं। इसी तरह वैष्णव मत के प्रसार के दौरान महंतों और संतों ने जनजतियों के जीवन में परंपरागत रूप से शा मल शष्टाचार और रीति-रिवाजों का उदारतापूर्वक अनुपालन कया।

सत्र के गुरुओं ने सभी सामाजिक ववादों जैसे धा र्मक ववाद, अवैध यौन कार्यों तथा सामाजिक परम्पराओं के उल्लंघन आदि में निर्णय देकर गाँव में अनुशासन बनाए रखने में बहुत सहयोग दिया। सत्र वे अंतिम स्थान थे जहां ऐसे मामलों के समाधान मलते थे। ऐसे सभी ववाद जो गाँव के अग्रणी लोगों द्वारा अपने नामघर में नहीं निपटाए जा सकते थे, वे निपटारे के लए सत्र को संद र्भत कर दिए जाते थे। गुरुओं द्वारा ऐसी सभी समस्याओं में या तो सत्र से निर्णय देकर या ऐसे गाँव में भ्रमण के दौरान समाधान कया जाता था। यद्य प जब ब्रिटिश सरकार ने कानूनी अदालतें स्था पत की तो बहुत से ऐसे ववादों को वहाँ दर्ज कया जाने लगा। परिणामस्वरूप ग्राम-पंचायतों के निर्माण के बाद ऐसे अ धकांश

मामले बिना सत्र या अदालत के संदर्भन के वहाँ सुलझाए जाने लगे। फर भी धा र्मक ववाद और अंतर्जातीय ववाह संबंधी मामले पूर्व की भांति सत्रों को संद र्भत कए जाते हैं।

सत्र का शैक्ष णक योगदान:

आधुनिक शक्षा के प्रचार-प्रसार से पहले यानी क भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति तक, सत्र ही शक्षा का केंद्र हुआ करता था। सुस्था पत सत्र में ग्रामीण युवकों को लाकर श क्षत बनाने का काम कया जाता था। वरिष्ठ और अनुभवी मार्गदर्शक इन प्र शक्षुओं का पूरा ध्यान रखते और ये प्र क्षशु सत्र में एक सन्यासी के रूप में ही रहा करते। इनके अलावा वरिष्ठ लोग उन युवाओं का भी मार्गदर्शन करते जो समय-समय पर दीक्षा के उद्देश्य से सत्र को आते। उन्हें सत्र के मानदंडों और धा र्मक सेवाओं के अलावा सत्र में प्रच लत तौर-त्तरीकों, रीति-रिवाजों, परम्पराओं के बारे में पौरा णक कथाओं के माध्यम से बताया जाता था। साथ ही उन्हें मूर्तिपूजा की व धयों से भी अवगत कराया जाता था। ज्यादातर सत्रों मेंन तोल्स यानी क वद्यालयों का प्रावधान भी होता था जहां शक्षकगण व्याकरण, ज्योतिषशास्त्र, धा र्मक ग्रन्थ, महाकाव्य आदि छात्रों को पढाया करते थे। हालां क ये तोल्स सत्र प्रांगण में रह रहे छात्रों के लए ही था ले कन, बाहरी छात्रों को भी यहाँ प्रवेश दी जाती थी।

सभी सत्र, चाहे वे छोटे हों या बड़े एक पुस्तकालय की व्यवस्था थी। जो बड़े सत्र थें वहाँ धा र्मक पुस्तकों के अलावा व भन्न वषयों पर कताबें उपलब्ध थीं। जैसे क, औनिअती सत्र के पुस्तकालय में हस्त मुक्तावली (नृत्य और हाथों की मुद्राओं पर आधारित पुस्तक) और हस्ति वद्यार्नाव (हा थयों पर एक चत्र पुस्तिका) जैसी कताबें भी थीं। अगर पेड़ के छालों पर ल खत प वत्र ग्रंथों की पांडु ल पयाँ (शास्त्रों) को सहेजकर रखना और उनका संरक्षण करना पुनीत कर्तव्य माना जाता था। इस लए कभी-कभी इन कताबों को साफ़ करके धूप दिखाने के बाद पुनः पुस्तकालय रिकॉर्ड में रख दिया जाता था। सत्र से सम्बं धत अ धकांश पुस्तकें वद्वान हेम चंद्र गोस्वामी ने संग्रह की हैं। और इस वजह से भी सत्र को ग्रामीण पुस्तकालय भी कहा जा सकता है।

दृश्य-श्रव्य शक्षा के क्षेत्र में सत्र का योगदान काफी महत्वपूर्ण हैं। हर सत्र में, भागवत और अन्य प वत्र पुस्तकों से लए गए उद्धरण सत्र की दैनिक दिनचर्या का एक हिस्सा बना। इस तरह के कार्यक्रम के माध्यम से, अ श क्षत जनता को धा र्मक प्रथाओं की पौरा णक कहानियों, नैतिक आदर्शों और पदार्थों के बारे में जानने का एक मार्ग खुला। डॉ। सूर्य कुमार भुइयां, असम के महान इतिहासकार ने इसका उल्लेख कया था क अस मया समाज हो सकता है क अनपढ़ हो, ले कन कभी एक अज्ञानी नहीं हो सकता। वैष्णव आंदोलन द्वारा प्रदान की गयी आध्यात्मिक शक्षण के प्राकृतिक तरीके से ऐसा संभव हुआ।

इसके अलावा, सत्र के अंकीय भावना (एकांकी नाटक) मंचन द्वारा भारतीय वचारधाराओं, मान्यताओं, धा र्मक आस्था और परंपराओं से जनता का परिचय कराया। जहाँ कई बाधाओं को पार करते हुए असत्य पर सत्य की वजय की गाथा साथ ही जीवन संघर्ष गाथाओं को इस प्रकार से दर्शाया जाता क आम दर्शक को इस से शक्षा मले। जैसे क, राजा हरिश्चंद्र कैसे अपने वचन पर कायम रहे, मह र्ष द धची का त्याग, कर्ण की भद्रता, राम द्वारा अपने पता की इच्छा का सम्मान, सीता और सा वत्री की प वत्रता, राम के प्रति भारत और लक्ष्मण का निस्वार्थ भ्रातृ प्रेम, रावण का अति गौरव, दुर्योधन का अहंकार आदि इन भावनाओं (नाटकों) में मुख्य रूप से प्रद र्शत कए जाते जिससे क आम जनता को अच्छी शक्षा प्राप्त हो। इसके अलावा, लोगों को दिलचस्पी ल लत कला, नृत्य, अ भनय, संगीत, वाद्ययंत्र बजाना और इस तरह के शो में गायक के रूप में प्रस्तुत होना आदि के हुनर सीखने में भी बढ़ी।

कला और शल्प के क्षेत्र में सत्र का योगदान:

सत्र संकुल में रहने वाले ब्रह्मचारी शष्य, अपने खाली समय में, अपनी जी वका चलाने के लए व भन्न कलात्मक कार्यों में और नामघर, म णकूट और अपने आवासों के सौंदर्यीकरण में स्वयं को व्यस्त रखते हैं। वे प्रायः मूर्तियों व प वत्र पुस्तकों को रखने के लए संहासन, व भन्न देवी-देवताओं की लकड़ी की मूर्तियो, काष्ठ जाराइस (स्टैंड के साथ तस्तरी), हांथी दाँत के सामान, भावना में अ भनय करने वालों के लए वस्त्र तथा बांस व बेंत से नि र्मत सजावटी सामान का निर्माण करते हैं। हांथी दाँत का कार्य व बरपेटा सत्र के बहुल-ज्योति स्टैंड और औनियाती सत्र के बेंत के पंखे आज भी ऐसे कलाकारों की प्रतिभा के गवाह हैं। यह प्र क्रया आज भी सत्रों में प्रच लत है जिससे ब्रह्मचारी लोग अपनी जरूरत के सामान स्वयं बना सकें। निश्चित ही ऐसे कुछ शष्य अपनी जरूरत से ज्यादा धन कमाने पर ध्यान देते हैं। कुछ सत्रों में ऐसे पर्याप्त प्रमाण हैं जहां आम तौर पर प वत्र पुस्तकों को चत्रित करने की कला का प्रदर्शन कया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है क पुराने दिनों, वशेषकर 17वीं व 18वीं सदी में, असम में यह कला काफी लोक प्रय हुई। मूलभूत रूप से अभी भी कलाकारों के कुछ समूहों के बीच सी मत इस कुटीर उद्योग में उनकी निर्माण प्र क्रया में दो भन्न-भन्न प्रारूप व प्रतिकृति प्रमा णत थे। एक शाही वातावरण में आधारित व वक सत था। बा ल सत्र के चत्र भागवत और अब तक प्राप्त अन्य चत्रित पुस्तकें, सत्रीय प्रारूप का अनुकरण करते थे। जो शाही प्रारूप पर आधारित हैं ,वे अ धक प्रगतिशील हैं, जहां मुगल कला का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रमा णत है। दूसरी तरफ, सत्रीय प्रारूप और धा र्मक वषयवस्तु पर आधारित चत्रित प्रारूप और भी अ धक सरल हैं। पंक्तियों व रंगों का अच्छा प्रयोग उन चत्रित पुस्तकों में मलता है, जहां परिवर्तनशील तथा अपरिवर्तनशील दोनों वषयों का खूबसूरती के साथ चत्रण कया गया है।

नृत्य व संगीत के क्षेत्र में सत्रों के योगदान का वशेष रूप से उल्लेखनीय है। सत्रीय संतों द्वारा र चत व भावना प्रदर्शन में प्रस्तुत बोरगीत तथा गीत और वैवाहिक अवसरों पर प्रस्तुत कए जाने वाले गीत संक लत व संर क्षत कए गए हैं। रागों और शास्त्रीय संगीत की तालों का व्यवस्थित प्रयोग सत्रीय गीत व संगीत में दिखाई पड़ता है। संगीत वाद्य-यंत्रो(गायन-बयान) अपने आप में महत्वपूर्ण हैं। बोरगीतों में तालों का वशेष उल्लेख मलता है। संकेत पद्धति(स्वर ल प) की खोज से पूर्व, सत्र के वशेषज्ञ संगीतज्ञों ने परंपरागत बोलचाल की व ध से रगों व तालों का मूल स्वरूप बनाए रखने के लए अपना सर्वोत्तम प्रयास कया। ले कन वे उनका मूल स्वरूप बनाए रखने में कतना सफल हुए, यह एक अलग चर्चा का वषय है। इसके अतिरिक्त कई सत्र अर्ध-शास्त्रीय संगीत और शास्त्रीय संगीत की व भन्न रीतियों के लोकगीतों के अध्ययन केंद्र रहे हैं, जैसा क बैरागी नाम, थया नाम, घोष-धुरा, बोना, टोकरी गीत, काकुती और हिरा नाम आदि में मलता है, जो क सत्रों में भली-भांति प्रस्तुत कए जाते हैं। ये लोकगीत व संगीत गावों में अभी भी जी वत हैं। संगीत को छोडकर, सत्र के शास्त्रीय संगीत की परम्पराएँ, दुर्लभ संपत्तियाँ हैं, जो कहीं भी नहीं मलतीं। यद्य प ओझा-पाली नृत्य की परम्पराएँ शंकरदेव युग से पूर्व से प्रच लत हैं, जो सत्रों में वशेष दर्जा प्राप्त कर चुकी हैं, जहां यह नृत्य काफी सावधानी से पो षत कया जाता है। सत्रीय नृत्य, जो वैष्णव परम्पराओं के प्रभाव के अंतर्गत वक सत हुए, उनमें सूत्रधारी नृत्य, चाली नास, दशावतार नृत्य आदि शा मल हैं। 'भावनाओं'में चरित्रों अथवा अ भनयकर्ताओं द्वारा प्रवेश करते समय या मंच पर युद्ध करते समय कए जाने वाले नृत्य समान रूप से उल्लेखनीय हैं। पछले ना मत नृत्य को छोडकर, हाथों की भाव-भं गमा और कदमों ने अपनी शास्त्रीय परम्पराओं को अछुण्ण बनाए रखा है। वाद्य यंत्रों के साथ ये नृत्य व संगीत- जैसे खोल, और ताल भन्न- भन्न सत्रों में थोड़ा अलग हो सकते हैं, जो क स्थानीय वातावरण द्वारा प्रभा वत कए जाते हैं। ले कन सामान्यतया, आम तौर पर समान तरीकों का अनुसरण करते हैं। यद्य प यह नहीं कहा जा सकता है क सभी सत्रों ने इन नृत्य परम्पराओं को बनाए रखा है; ले कन वे सुस्था पत सत्र, जिनका एक ऐतिहा सक भूतकाल है, ने अपने वशेषज्ञ प्रा धकारियों जैसे गायन, बयान, ओझा, सूत्रधार आदि के निर्देशन में निरंतर व सचेत प्र क्रयाओं द्वारा इन्हे बनाए रखा है। ऐसे सत्र मोटे तौर पर एकांकी नाटकों में अ भनय करते समय भी सभी परम्पराओं का ध्यान रखते हैं।

सत्र का साहित्यिक योगदान:

प्राचीन असमी साहित्य का योगदान कसी भी प्रकार से शाही संरक्षण प्राप्त करने से कम नहीं है। कुछ मामलों में वे बाद वाले से भी बड़े हैं। शाही घराने और सत्र प्राचीन साहित्यिक कार्यों के लए प्रेरणा स्रोत थे। ऐसा नहीं है क व्यक्तिगत रूप से कसी ऐसी कृति की रचना नहीं हुई, ले कन वे तुलनात्मक रूप से संख्या में कम हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है क महापुरुष शंकरदेव और महादेव की कृतियाँ शुद्ध रूप से सत्रीय साहित्य (उनकी मान्यता के पक्ष में तर्क हैं) हैं। महापुरुष के उत्तरा धकारियों द्वारा ल खत

धा र्मक पुस्तकों पर भी सत्र का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष दोनों तरह का प्रभाव है। सत्र ने बाद की पीढ़ियों के लेखकों जैसे रामचंद्रन, दैत्यारी, राम राय, नीलकंठ, द् वजभूषण और रामानन्द आदि, द्वारा र चत साहित्यिक कार्यों जैसे जीवनी, नाटक, संगीत आदि में महत्वपूर्ण भू मका निभाई,इनकी संख्या 100 से भी अ धक है, जो अ धकांशतया धा र्मक नेताओं के जीवन और कार्यों पर आधारित हैं। चूं क ऐसी पुस्तकें आध्यात्मिक उद्देश्य और परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर लखी गयी हैं, इस लए लेखकों ने गुरुओं की मानवीय कमजोरियों और पारिवारिक जीवन की ओर ध्यान नहीं दिया है और उन्हे अपनी जीवनियों में शा मल नहीं कया है। ले कन धा र्मक पहलू पूरी तरह से दर्शाया गया है। इससे अ धक ये पुस्तकें उस समय प्रच लत सामाजिक और राजनैतिक स्थितियों की पर्याप्त जानकारी देती हैं। ऐसी जीवनियों की संख्या 100 से अ धक है।

सत्रों का दूसरा सर्वा धक महत्वपूर्ण योगदान उनके एकाँकी नाटक(अं कया नात) हैं। समान तरीकों का अनुसरण करते हुए, जैसा क दोनों महापुरुषों ने अपने 12 एकाँकी नाटकों में कया है, परवर्ती गुरुओं ने भी सत्रों में ऐसे कई नाटक लखे और मं चत कए। ऐसी मान्यता है क महापुरुष शंकरदेव ने 'चन्ह यात्रा' का मंचन शेक्स पयर के पहले नाटक के मंचन से 119 वर्ष पूर्व ही कर दिया था। ले कन ऐसे कई नाटकों में नवीनता का अभाव था, तथा ये सामान्य शैली पर आधारित थे। फर भी कुछ वचलन उनमें पाये गए। ब्रजवाली भाषा और संस्कृत श्लोकों का प्रयोग धीरे-धीरे कम हो गया, जब क नाटक लेखन में व भन्न पहलुओं जैसे कई प वत्र पुस्तकों का नाट्य रूपान्तरण, संवादों में छंदों के स्थान पर गद्य का प्रयोग, गीतों की अ धक संख्या, बिलाप (ज़ोर-ज़ोर से रोना) और अपने नाटकों में युद्ध के अ धक दृश्यों को शा मल कए जाने पर ज़ोर दिया जाने लगा। समय बीतने के साथ, एकाँकी नाटकों का मंचन सत्रो तक सी मत नहीं रह गया। इन्हे शाही घरानों में स्थान मला,जहां त्योहारो व वशेष अवसरों पर इनका मंचन कया जाता था। शाही घरानों ने वदेशी शाही उच्चा धकारियों व राजदूतों के मनोरंजन के लए सत्र के ऐसे कलाकारों को प्रश्रय दिया। बाद में लगभग प्रत्येक सत्र में अपनी क्षमता और इस क्षेत्र में अपने नियंत्रण को प्रद र्शत करने के लए सत्रा धकारों ने ऐसे एकाँकी नाटको का लेखन व मंचन प्रारम्भ कया, जो समय बीतने के साथ सत्रों की एक परंपरा बन गया। इसके अतिरिक्त सत्र परिसर में रहने वाले शष्य, सभी आवश्यक वस्तुएं जैसे- कलाकारों के लए परिधान, पेंट, ह थयार,मास्क, नृत्य व संगीत वाद्य यंत्र सत्र के अंदर ही बनाया करते थे। दोनों महापुरुषों के उदाहरणों का अनुसरण करते हुए, परवर्ती गुरुओं ने भी हजारों की संख्या में मंत्र व बहुत से गीतों की रचना की ।दोनों महापुरुषों के रागों के प्रयोग के अतिरिक्त, कुछ ऐसे रचयिताओं ने दूसरे रागों का भी प्रयोग कया।जैसा क दोनों महापुरुषों द्वारा बोरगीतों में कया गया है, इन रचयिताओं ने भी जीवन की संक्रमणीय प्रकृति , भक्ति की दैवीय शक्ति , शब्दों के लोभ का भ्रम और अपने र चत गीतों में भगवान कृष्ण के बचपन के आलो कक कार्यों के बारे में उल्लेख कया है।उनके ववरण ने उस सम्मान वन्यास का अनुसरण कया है जिसका प्रयोग बोरगीतों

में कया गया है।ले कन उनकी तकनीकी व वषय, वलक्षण वचारों से रहित है, इनमें से अ धकांश गीत कृष्णमुखी हैं यद्य प इन रचनाओं में राम, सीता, राधा और रुक्मिणी आदि भी दिखाई पड़ते हैं।18वी सदी में र चत कुछ गीतों में ब्रह्मबैबर्त पुराण और गीतगो वंद का प्रभाव भी परिल क्षत होता है जहां राधा को नायिका के रूप में तथा कृष्ण से उनके वयोग व पुन र्मलन का उल्लेख कया गया है। गीत रचना के क्षेत्र में मायामरिया सत्र के अनिरुद्धदेव, बोर यदुमनी और सत्र की दिहिंग शाखा के उनके उत्तरा धकारी , अहटगुरी सत्र आदि के श्री रामानन्द और पुरुषोत्तम ठाकुर तथा पुरुष संगति से संबन्धित कुछ अन्य वद्वानो ने भी बड़ी संख्या में ऐसे गीतों की रचना की। जीवनी लेखों के संदर्भ के अनुसार दूसरे सत्रों के कुछ गुरुओं ने भी कुछ गीतों की रचना की। महाभारत, रामायण, पुराण और दूसरे प वत्र काव्यों के असमी भाषा में रूपान्तरण में सत्रीय गुरुओं के योगदान को बिल्कुल भी नकारा नही जा सकता। भ देव, गोपाल चरण द् वज , रामचरण ठाकुर, दैत्यारी ठाकुर, गो वंदा मश्रा, गोपाल मश्रा, केशव कायस्थ ,बोर-यदुमनी , अनंतदास अथवा हृदयानंद, रत्नाकर कंडाली , रघुनाथ महंत , गोपाल अता और कांगसारी आदि से लेकर बहुत बड़ी संख्या में लेखकों ने असमी में भागवत और पुराणों की रचना की, वे या तो सत्रा धकार थे, या वे लोग थे जो सत्रीय वातावरण में रहते थे। असम का आधे से अ धक संख्या में प्राचीन साहित्य सत्रों के प्रभाव में लखा या रचा गया।